 ISBN: 978-81-947902-7-3

वैदिक ग्रंथों में नारी विमर्श

डॉ. महेश कुमार दायमा
वरिष्ठ सहायक आचार्य,
इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर,
राजस्थान, भारत

सारांश

नारी विमर्श वर्तमान साहित्य-चिन्तन का एक सुचिन्तित आयाम है। विमर्श को कभी काल की सीमाओं में बाँधकर नहीं देखा जा सकता। इसे किसी सिद्धान्त विशेष के रूप में भी समेटा नहीं जा सकता। यह तो जीवन संदर्भित चिन्तन का एक सतत प्रवाह होता है, जो विभिन्न माध्यमों से विभिन्न रूपों में प्रकाशित होता है। सुविख्यात नारीवाद चिन्तक सिमोन द बोउआर ने 1949 ई. में प्रकाशित 'दि सेकिंड सेक्स' पुस्तक में लिखा कि हर जगह ''नारी या तो देवी के रूप में पूजा की वस्तु या फिर दासी के रूप में उपयोग वस्तु बनाकर प्रस्तुत किया गया है। अपने ऊपर आरोपित इन दोनों स्थितियों को उसने सहर्ष स्वीकार तो किया ही है बल्कि स्थायित्त्व देने के लिए इनको अपने आचरण में उतारा तथा अगली पीढ़ियों को संस्कार के रूप में ओर आगे बढ़ाने के लिए दिया भी है।

देवी रूप में उसे दी गई प्रतिष्ठा दरअसल उसे उस मर्यादा में बंधे रहने के लिए बाध्य करती है जो पुरूष प्रधान समाज ने उसे अपने अधीन रखने के लिए बनाई थी। इसका उल्लंघन उसे तत्काल कुलटा, पतिता व कलंकिनी

बना देता है और इसका प्रायश्चित, जान देकर अथवा जीवनभर सामाजिक उत्पीड़न, सहकर ही कर पाती है। मानव सभ्यता के सांस्कृतिक इतिहास को देखने से पता चलता है कि आदिम कबीलाई युग तक मातृ प्रधान समाज रहा है। जहाँ एक स्त्री, पुरूष की जननी होने के कारण कबीले की मुखिया होती थी। प्राकृतिक निर्भरता एवं सामाजिक विकास न होने के कारण उस समय सामाजिक सरोकारों का कोई विस्तार नहीं हुआ था और न ही यौनिक संबंधों के बारे में किन्हीं विशेष विषयों का सूत्रपात हुआ था। यहाँ तक आपसी संबंधों में रिश्तों का निर्माण भी नहीं हुआ था तथा नर व मादा के आधार पर आपस में यौनिक संबंध कायम थे। आदिम समाज में आधुनिक समाज के बरअस्क जो विकास के नाम पर मनुष्यता द्रोही अपसंद कृति निर्मित हो गई। आदिम समाज में नारी हितकारी अच्छाइयां अवश्य थी, लेकिन वर्तमान से आदिम सभ्यता की ओर लौट नहीं सकते।

भारतीय संस्कृति के इतिहास की गुफाओं में दाखिल होते समय धर्म को अनदेखा नहीं कर सकते और वैदिक ग्रंथों पर आधारित भारतीय धर्मों की नियमावली ने कभी भी स्त्रियों को पुरूषों के बराबर अधिकार प्रदान नहीं किया।

वेद, पुराण, स्मृति, महाभारत आदि ग्रन्थ भारतीय सभ्यता और संस्कृति की धरोहर हैं और इनका इसी दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाय तो भारतीय इतिहास की न जाने कितने विश्रृंखलित कड़ियों को जोड़ने में मदद मिल सकती है लेकिन विडम्बना यह है कि इनको धर्मग्रन्थ मानकर पूज्य घोषित कर दिया गया है जबकि स्त्री-विमर्श के दृष्टिकोण से तो इनके विशेष अध्ययन की आवश्यकता है क्योंकि इन्हीं के अंदर उस रहस्य की चाभी छुपी है जो यह बताती है कि किस प्रकार मातृ-सत्तात्मक युग की शक्तिशाली स्त्रियों

को पहले देह में और फिर योनी में संकुचित करके उसे औपनिवेशक संपत्ति घोषित कर दिया गया। यदि प्रथम लिखित शब्द से ही सभ्यता की शुरूआत मानें तो कह सकते हैं कि यह स्त्री के स्त्रीत्व का बलिदान दिवस था जिसे लगातार सुनियोजित षडयंत्र करके न केवल पुख्ता किया गया बल्कि इसके लिये उनका मानसिक अनुकूलन भी किया गया जो आज भी जारी है। यही कारण है कि नारी-विमर्श और नारी-सशक्तिकरण का चाहे जितना बखान किया जाये, लेकिन उनकी ध्वनि सीमित ही रहेगी।

वेद, पुराण और महाभारत से उदाहरण देकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि आज के परिप्रेक्ष्य में किस प्रकार इन ग्रन्थों में स्त्रियों की अस्मिता के साथ खिलवाड़ किया गया है। वेदों में वर्णित कुछ कामुक दृष्टांत क्रमशः हरिमोहन झा की पुस्तक 'खट्टर काका' से साभार लेकर यहां उद्धृत किए जा रहे हैं-

अभित्वा योषणों दश, जारं न कन्यानूषत। मृत्यसे सोम सातवे (ऋग्वेद 9/56/3)

अर्थात कामातुरा कन्या अपने जार (यार) को बुलाने के लिये इसी प्रकार अंगुलियों से इशारा करती हैं।[1]

मर्य इव युवतिभिः समर्षति सोमः। कलशे शतयाम्ना पथा (ऋग्वेद 9/86/16)

"कलश में अनेक धारों से रस का फुहारा छूट रहा है। जैसे, युवतियों में ....."[2]

सरज्जारो न योषणां, वरो न योनिमासदम् (ऋग्वेद 9/101/14)

अर्थात "यह रस उसी कलश में जा रहा है जैसे युवतियों में जार का ..."[3]

को वा शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा वृणुते। (ऋग्वेद 7/40/2)

अर्थात् "जैसे विधवा स्त्री शयनकक्ष में अपने देवर को बुला लेती है, उसी

प्रकार मैं भी यज्ञ में आपको सादर बुला रही हूँ।[५]

वृषभो न तिग्मश्रृंगोऽन्तर्यूथेषु सेरुवत् (ऋग्वेद 10/86/85)

अर्थात् जिस प्रकार टेढ़ी सींगवाला साँड़ मस्त होकर डकरता हुआ रमण करता है, उसी प्रकार तुम भी मुझसे करो।"[६]

उपोप में परामृश मामेदभ्राणिमन्यया सर्वाहमस्मि रोमशा गान्धारीणामवाविका (ऋग्वेद 1/26/7)

अर्थात् आप मेरे पास आइए और बेधड़क पकड़िए। देखिए भेड़ के रोओं की तरह कितने बड़े-बड़े.....।"[७]

गुप्त साधन मंत्र में लिखा है -

नटी कापालिका वेश्या रजकी नापितांगना
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका
मालाकारस्य कन्या च नवकन्याः प्रकीर्त्तिताः

अर्थात् "नटी, संन्यासिनी, वेश्या, धोबिन, नाइन, ब्राह्मणी, शूद्रा, ग्वालिन, मालिन, ये नव कन्याएँ गुप्त साधना के लिए अधिक उपयुक्त है।"[७]

डॉ. तुलसीराम ने अपने लेख "बौद्ध धर्म तथा वर्ण व्यवस्था" में ऋग्वेद के प्रथम मंडल के छठवें मंत्र का अनुवाद इस तरह किया है, "यह संभोग्य युवती (यानी गुप्तांग पर बाल उग आए हों) अच्छी तरह आलिंगन (बद्ध) होकर सूतवत्सा नकुली (यानी एक रथ हाँकने वाले की बेटी, जिसका नाम नकुली था) की तरह लम्बे समय तक रमण करती है। वह बहु-वीर्य सम्पन्न युवती मुझे अनेक बार भोग प्रदान करती है।"[8] इसी लेख में यह भी कहा गया है कि ऋग्वेद के अंग्रेजी अनुवादक राल्फ टी ग्रीफिथ को दसवें मंडल के 86वें सूक्त के मंत्र 16 और 17 इतने वीभत्स लगे कि उन्होंने इनका अनुवाद ही नहीं किया।

ऋग्वेद के दसवें मंडल के दसवें सूक्त में सहोदर भाई बहन यम और यमी का संवाद जिसमें यमी, यम से संभोग याचना करती है। इसी मंडल के 61वें सूक्त के पाँचवे-सातवें तथा अथर्ववेद (9/10/12) में प्रजापति का अपनी पुत्री के साथ संभोग वर्णन है। यम और यमी के प्रकरण का विवरण अथर्ववेद के अठारहवें कांड में भी मिलता है।

विश्वनाथ काशीनाथ राजवाडे कृत भारतीय विवाह संस्था का इतिहास पुस्तक में पिता-पुत्री के सम्बन्धों पर चर्चा करते हुए लिखते हैं कि वशिष्ठ प्रजापति की कन्या शतरूपा, मनु की कन्या इला, जन्हू की कन्या जान्हवी (गंगा), सूर्य की पुत्री उषा अथवा सरण्यू का अपने-अपने पिता के साथ पत्नी भाव से समागम होना बताया गया है।[9]

इस प्रकार के सम्बन्धों की चर्चा महाभारत के शांति पर्व के 207 वें अध्याय के श्लोक संख्या 38 से 48 तक में भीष्म द्वारा की गई है। इन श्लोकों का अर्थ निम्नवत् किया है -

कृतयुग (संभवतः सतयुग) में स्त्री-पुरूषों के बीच, जब मन हुआ तब समागम हो जाता था। माँ, पिता, भाई, बहन का कोई भेद नहीं था। वह यथावस्था थी (श्लोक संख्या 38) त्रेता युग में स्त्री-पुरूषों द्वारा एक-दूसरे को स्पर्श करने पर समाज उन्हें उस समय के लिए संभोग करने की अनुमति देता था। यह पसन्द नापसंद या प्रिय-अप्रिय का चुनाव करने की व्यवस्था थी (श्लोक संख्या 39) द्वापर युग में मैथुन धर्म शुरू हुआ। इस पद्धति के अनुसार, स्त्री-पुरूष अपनी टोली में जोडियो में रहने लगे, किन्तु अभी भी इन जोडियों को स्थिर अवस्था प्राप्त नहीं हुई थी और कलियुग में द्वंद्वावस्था की परिणति हुई अर्थात् जिसे विवाह संस्था कहते हैं उसका उदय हुआ। (श्लोक संख्या 40)[10]

'खट्टर काका' पुस्तक के पृष्ठ 76 पर भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग खंड के हवाले से उद्धृत निम्न श्लोक की मानें तो ईश्वरीय सत्ता के तीनों शीर्ष प्रतीक भी इस स्वच्छन्द सम्बन्ध से मुक्त नहीं हैं -

स्वकीयां च सुतां ब्रह्मा विष्णुदेवः स्वमातरम्
भगनीं भगवान् शंभुः गृहीत्वा श्रेष्ठतामगात्।

स्त्री के मुँह से ही स्त्रियों की बुराई सिद्ध करने के आख्यान मिलते हैं। स्त्रियों का यह चरित्र-चित्रण उनकी विश्व-विख्यात ईर्ष्या भावना की छवि को उद्घाटित करता है।

स्मृतियाँ कन्या-संभोग व बलात्कार के लिए प्रेरित करती है। मनुस्मृति के अध्याय 9 के श्लोक 94 में आठ वर्ष की कन्या के साथ चौबीस वर्ष के पुरूष के विवाह का प्रावधान है - उद्धृत वाक्य "चौबीस वर्ष का पुरूष, आठ वर्ष की लड़की से विवाह करे तथा विवाह की रात्रि में समागम किया जाय।" अतः आठ वर्ष की लड़कियाँ समागमेय हैं, यह मानने की रूढि इस देश में थी, इसमें शक नहीं है। मनु स्मृति में लिखा है - कन्या के जन्म से लेकर छः वर्ष तक दो-दो वर्ष की अवधि के लिये उस पर किसी न किसी देवता का अधिकार होता था। अतः उसके विवाह की आयु का निर्धारण आठ वर्ष किया गया। यम संहिता और पाराशर स्मृति दोनों ही रजस्वला होने से पूर्व कन्या के विवाह की आज्ञा देते हैं।

प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे यः कन्या न प्रयच्छति मासि मासि रजस्तयाः पिब्रन्ति पितरोऽनिशम् (यम संहिता)।

यदि कन्या का विवाह नहीं होता और यह बारह वर्ष की होकर रजस्वला हो जाती है तो उसके पितरों को हर माह रज पीना पड़ेगा -

रोमकाले तु संप्राप्ते सोमो सुंजीथ कन्यकाम

रजः काले तुः गंधर्वो वहिस्तु कुचदर्श ने।

रोम देखकर सोम देवता, पुष्प देखकर गंधर्व देवता और कुच देखकर अग्नि देवता कन्या का भोग लगाने पहुँच जायेंगे।

जिस धर्म के देवता इतने अधर्मी हो, उस धर्म के अनुयायी तो उसका अनुसरण करेंगे ही। संस्कृत वाङ्मय ग्रन्थ व साहित्यिक रचनाओं में स्त्रियों के प्रति नकारात्मक सोच के कई उदाहरण मिलते हैं।

स्त्रियों का कृष्ण के प्रति अनुराग है जबकि स्त्रियों के साथ कृष्ण-लीला इनके चरित्र का सबसे कमजोर पहलू है। ब्रह्म वैवर्त में कृष्ण का राधा या अन्य गोपियों के साथ संभोग का जैसा विभत्स वर्णन है, उसे नैतिकता के मापदण्ड पर खरा नहीं ठहराया जा सकता। दलित और स्त्री उन सभी सुविधाओं और अवसरों से वंचित कर दिये गये जो उनके बौद्धिक क्षमता के विकास में सहायक थे। इस प्रकार मनु स्मृति से भी यह सिद्ध होता है कि दलित और स्त्री, वर्ण-व्यवस्था के बाहर का समुदाय है। मनु स्मृति में स्त्रियों की अस्मिता व स्वाभिमान पर कई तरीकों से कटाक्ष किया गया जैसे - शूद्र की शूद्रा ही पत्नी, वैश्य को वैश्य और शूद्र दोनों वर्णों की कन्याओं से, क्षत्रिय को क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तीनों वर्ण की कन्याओं से तथा ब्राह्मण को चारों वर्णों की कन्याओं से विवाह करने का अधिकार है।

मनु स्मृति में शूद्र स्त्री के बारे में लिखा है - जो शूद्रा के अधर रस का पान करता है उसके निःश्वास से अपने प्राण-वायु को दूषित करता है और जो उनमें सन्तान उत्पन्न करता है उसके निस्तार का कोई उपाय नहीं है। मदिरा पीना, दुष्टों की संगति, पति का वियोग, इधर-उधर घूमना, कुसमय में सोना और दूसरों के घरों में रहना ये छः स्त्रियों के दोष हैं। स्त्रियाँ रूप की परीक्षा नहीं करती न तो अवस्था का ध्यान रखती हैं, सुन्दर हो या कुरूप हों, पुरूष होने से

ही वे उसके साथ संभोग करती है।

पुंश्चल (पराये पुरूष से भोग की ईच्छा) दोष से चंचलता से और स्वभाव से ही स्नेह न होने के कारण घर में यत्नपूर्वक रखने पर भी स्त्रियाँ पति के विरूद्ध काम करती है। मनु ने सृष्टयादि में शय्या, आसन, आभूषण, काम, क्रोध, कुटिलता, द्रोह और दुराचार स्त्रियों के लिए ही कल्पना की थी।

इस लम्पट और उद्दंड कामुकता के वेग का प्रभाव ऐसा पड़ा कि यहाँ के यौनाचार्यों पर भी देवी तक की वंदना करते समय उनके कामांगों का स्मरण करना नहीं भूलते -

''वामकुचनिहित वीणाम, वरदा संगीत मातृकां वंदे। बायें स्तन पर वीणा टिकाये हुए संगीत की देवी की वंदना करते हैं।

स्मरेत प्रथम पुष्पणीम। रूधिर बिंदु नीलाम्बराम्।

घनस्तन भरोन्नताम्। त्रिपुर सुन्दरी माश्रये।

प्रथम पुष्पिता होने के कारण जिनका वस्त्र रक्त रंजित हो गया है, वैसी पीनोन्नतस्तऩी त्रिपुर सुन्दरी का आश्रय मैं ग्रहण करता हूँ।

कालतंत्र में काली का ध्यान - घोरदंष्ट्रा

करालास्या पीनोन्नतपयोधरा। महाकालेन च सपं विपरीतरतातुरा।

कच कुचचिबुकाग्रे पाणिषु व्यापितेषु/प्रथम जलाधि-पुत्री-संगमेऽनंग धाग्नि/ग्रथित निविऽनीवी ग्रन्थिनिर्मोचनार्थचतुरधिक कराशः पातु न श्चक्रमाणि।

लक्ष्मी के साथ चतुर्भुज भगवान का प्रथम संगम हो रहा है। उनके चारों हाथ फंसे हुए हैं। दो लक्ष्मी के स्तनों में, एक केश में, एक ठोढ़ी में। अब नीवी (साड़ी) की गांठ खोले तो कैसे?

इस काम के लिये अतिरिक्त हाथ चाहने वाले विष्णु भगवान हम

लोगों की रक्षा करें - पदमायाः स्तनहेमसद्मनि मणिश्रेणी समाकर्षके। किंचित कंचुक-संधि-सन्निधिगते शौरेः करे तस्करे। सद्यो जागृहि जागृहीति बलयध्यानै ध्रुवं गर्जता। कामेन प्रतिबोधिताः प्रहरिकाः रोमांकुरः पान्तु नः। अर्थात् लक्ष्मी की कंचुकी में भगवान का हाथ घुस रहा है। यह देखकर कामदेव अपने प्रहरियों को जगा रहे हैं - उठो, उठो घर में चोर घुस रहा है। प्रहरीगण जागकर खड़े हो गये हैं। वे खड़े रोमांकुर हम लोगों की रक्षा करें।

यह कामांध मस्तिष्क की वीभत्स परिणति जो देवी-देवताओं तक को नहीं छोड़ती लेकिन प्रचार किया जाता है कि देश की महान संस्कृति स्त्रियों को पूज्य घोषित करती है।

मनु ने स्त्रियों को प्रताड़ित, अपमानित करने का आदेश दिया है। यही कारण है कि स्त्रियों के बारे में पुरूषों में अच्छी धारणा अंकुरित ही नहीं हो पायी।

ऋग्वेद के मंत्र 10/85/37 हो या मनु स्मृति के नवें अध्याय के श्लोक 33 से लेकर 52 तक स्त्रियों को पुरूषों की खेती कहा गया है।

अभी तक की चर्चा में देखा कि किस प्रकार से आर्ष समाज से लेकर अर्वाचीन समाज तक स्त्रियों की छवि को एक विशेष खाँचे में ढाला गया है। मातृ-सत्तात्मक समाज रहा हो या पितृ-सत्तात्मक स्त्री को देह की भाषा में ही व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।

अतः नारी-विमर्श के परिप्रेक्ष्य में पहले इस मानसिकता को पुनर्परिभाषित करने की आवश्यकता है। आज भी पुरूष उसी जकड़न व मानसिकता के साथ जी रहा है।

धर्म, ईश्वर, देवता, परंपरा आदि सभी कुछ स्त्री के विरोध में संगुफित है और पुरूष इनका एकमात्र घोषित प्रतिनिधि है जो इन्हीं के माध्यम से स्त्री

की प्रताड़ना का संहिताकरण करता है और फिर उन संहिताओं की विधि विधान से पूजा करने के लिए स्त्रियों का मानसिक अनुकूलन भी करता है।

इक्कीसवीं सदी में आधी आबादी की स्थिति एकदम शोचनीय व असन्तोषजनक बनी हुई है। शिक्षा, सेवा, परिवार, राजनीतिक, हर कहीं महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की बनी हुई है जो कि उनकी सामाजिक विषमता को दर्शाता है। स्त्रियों की मानवीय गरिमा व सम्मान, चिन्ता का विषय बना हुआ है लेकिन नारी के प्रति हो रहे अत्याचारों व अपराधों में लगातार वृद्धि आधुनिक समाज के लिए चिन्ता का विषय बना हुआ है।

स्त्री-विमर्श की जटिल और संश्लिष्ट होती जा रही पहचान के मूल में पिछड़ी सामंती सोच और पतनशील पूंजीवादी नवउदारीकृत मूल्यों के घालमेल की पेचीदगी है, जहां नैतिक और आत्मिक विकृति का महिमामण्ड़न शीर्ष पर है।

स्त्री के प्रति हो रहे विभिन्न अपराधों के आंकड़े नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो ने सन् 2019 में जारी किए। एनसीआरबी के अनुसार भारत में प्रतिदिन 88 बलात्कार तथा प्रतिवर्ष लगभग 32,033 बलात्कार होते हैं। जो इस ओर संकेत करते हैं कि मानव सभ्यता के आदिकाल से वर्तमान तक स्त्री को दोयम दर्जे का ही स्थान प्राप्त है जो पुरूष की संकुचित सोच को इंगित करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *झा, हरिमोहन, खट्टर काका, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली, 2001, पृ. 229*
2. *वही, पृ.सं. 229*
3. *वही, पृ.सं. 229*

4. *वही, पृ.सं. 231*
5. *वही, पृ.सं. 231-232*
6. *वही, पृ.सं. 232*
7. *वही, पृ.सं. 234*
8. *तुलसीराम, बौद्ध धर्म तथा वर्ण व्यवस्था, हंस, अगस्त, 2004, पृ. 25*
9. *राजवाड़े, विश्वनाथ काशीनाथ, भारतीय विवाह संस्था का इतिहास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 97*
10. *वही, पृ. 78-79*